International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(1): 31-34

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(1): 31-34
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 05-12-2016
Accepted: 06-01-2017

अंगिरस
शोधच्छात्र, एम.फिल (संस्कृत)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत.

राजेश कुमार
शोधच्छात्र, एम.फिल (संस्कृत)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत.

Correspondence
अंगिरस
शोधच्छात्र एम.फिल (संस्कृत)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत.

श्रौत यज्ञों का शास्त्रीय स्वरूप

अंगिरस, राजेश कुमार

प्रस्तावना

वैदिक ऋषियों ने मानवमात्र के कल्याण के लिये पाँच महायज्ञों को प्रतिदिन व प्रतिपल करने का विधान किया है। वे पाँच यज्ञ हैं- ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और नृयज्ञ।

इन पाँच महायज्ञों में अपनी विशिष्ट भूमिका रखने वाला यज्ञ 'देवयज्ञ' है। इसी को हवन, अग्निहोत्र अथवा होम भी कहते हैं।

''यदग्नौ हूयते स देवयज्ञ:''

इस परिभाषा के अनुसार जो अग्नि में हवन किया जाता है, उसे देवयज्ञ कहते हैं। इसमें उत्तमोत्तम समिधाओं से हवनकुण्ड में अग्नि प्रज्ज्वलित करके वेदमन्त्रों के साथ सुगन्धित, रोगनाशक व मिष्ट हव्य-पदार्थों से आहुतियाँ दी जाती हैं।

यज्ञ के विषय में तो यहाँ तक कहा जाता है कि यज्ञ भारतीय संस्कृति का प्राण है। व्यक्ति जब माता के गर्भ में होता है तभी से ही वह अपने आसपास यज्ञ के वातावरण को महसूस करता है, और इसी यज्ञ के वातावरण में जन्म लेता है।

यज्ञ में ही अपना समस्त जीवन व्यतीत करता हुआ अन्त में यज्ञ में ही अपने जीवन की यात्रा को समाप्त करके परलोक के सुख भोगता है। दैनिक जीवन में उसे अग्निहोत्र, पञ्चमहायज्ञ, षोडश-संस्कार तथा अन्य कई श्रौतयज्ञ तो करने ही होते हैं, परन्तु शास्त्रकारों ने यहाँ तक कहा है कि वह अपने सम्पूर्ण जीवन को यज्ञ-रूप ही समझे। उपनिषद् में लिखा है-

''पुरुषो वाव यज्ञ:'' [1]

यज्ञ के महत्त्व को स्थूलरूप में समझें तो प्रत्येक मनुष्य के जीवन का परम लक्ष्य है मोक्षप्राप्ति और उसके साधक हैं वैदिक नित्यकर्म और पञ्चमहायज्ञ। सभी शास्त्रों और ऋषियों ने इस तथ्य को एकमत से स्वीकार किया है। और जीवन के अनुभवों में परख कर यह निष्कर्ष निकालकर व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र के कल्याणार्थ प्रस्तुत किया है।

इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए मैत्रायणी उपनिषद् में कहा गया है-

''अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकाम:'' [2]

यज्ञों का शास्त्रीय विभाजन

यदि यज्ञों के विभाजन की बात कही जाए तो यज्ञों का विभाजन अपने-आप में अत्यन्त दुष्कर कार्य है। परन्तु फिर भी कुछ ग्रन्थों में यज्ञों के विभाजन व संस्थाओं की बात कही गई है। आइये इसे समझने का प्रयास करते हैं-

'गोपथ ब्राह्मण' में सामान्यत: यज्ञ की तीन संस्थाएँ स्वीकृत थीं- (1) पाकयज्ञ संस्था (2) हविर्यज्ञ संस्था (3) सोमयज्ञ संस्था।

''सप्तसुत्या: सप्तपाकयज्ञा: हविर्यज्ञा: सप्त तथैकविंशाति'' [3]

1. पाकयज्ञ संस्था- इस संस्था के अन्तर्गत सात यज्ञों को परिगणित किया गया है जो इस प्रकार है-

औपासन होम	वैश्वदेव
पार्वण	अष्टकाश्राद्ध
मासिक श्राद्ध	श्रवणाकर्म
शूलगाव	

2. हविर्यज्ञ संस्था- इस संस्था के अन्तर्गत भी सात यज्ञों को ही रखा गया है-

अग्न्याधान	अग्निहोत्र
दर्शपूर्णमास	निरूढ़ पशुबन्ध
आग्रायण	चातुर्मास
सौत्रामणि	

3. सोमयज्ञ संस्था- इस संस्था में भी सात प्रकार के यज्ञों का विधान किया गया है-

अनिग्नष्टोम	अत्यग्निष्टोम
उक्थ्य	षोडशी
वाजपेय	आप्तोर्याम
अतिरात्र	

इस प्रकार 7+7+7=21 प्रकार के यज्ञ हो जाते हैं। इन 21 प्रकार के यज्ञों को स्मार्त और श्रौत नामक दो संस्थाओं में विभक्त किया गया है।

1. स्मार्त यज्ञ- स्मार्तयज्ञ के अन्तर्गत 7 पाक यज्ञों को गृहीत किया जाता है। इन पाक यज्ञों का निरुपण स्मृति तथा गृहसूत्रों में किया गया है। इन यज्ञों में पके हुए अन्नों की आहुति दी जाती है।
2. श्रौत यज्ञ- यदि श्रौत यज्ञों की बात करें तो इसके अन्तर्गत सात हविर्यज्ञ तथा सात सोमयज्ञों को रखा जाता है। इन यज्ञों का निरुपण मुख्य रूप से श्रौत सूत्रों में किया गया है।

हविर्यज्ञों में दूध, चावल, जौ औद द्रव्यों की आहुति दी जाती है। सोमयज्ञों में विशेष रूप से सोमरस की आहुति के साथ पशुद्रव्य की आहुति भी दी जाती है।

यज्ञों के अन्य प्रकार के विभाजन से पहले हम यह जानने का प्रयास करते हैं कि गोपथब्राह्मण में दिया गया यज्ञों का यह विभाजन क्या सभी यज्ञों को अपने इस विभाजन के अन्तर्गत समाहित कर लेता है। इस पर विचार करने की आवश्यकता है, क्योंकि यदि हम गोपथब्राह्मण द्वारा किये गये इस विभाजन को ही सम्पूर्ण यज्ञों का विभाजन मान लें या ये मान लें कि विश्व में होने वाले सभी यज्ञ इस विभाजन में समाहित हो जाते हैं तो बड़ी दुविधाा की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार तो संसार में केवल 21 प्रकार के ही यज्ञ मानने पड़ेगें। जबकि यज्ञ इससे कहीं अधिक हैं। जिनको गिनना सम्भव नहीं है।

वस्तुत: सात पाकयज्ञों के अतिरिक्त भी अनेक पाकयज्ञ गृहसूत्रों में उपलब्ध होते हैं। हविर्यज्ञों और सोमयज्ञों के भी बहुत से रूप श्रौत सूत्रों में प्राप्त होते हैं। इस आधार पर हमें यह मानना होगा कि यज्ञों की संख्या 21 से कही अधिक है।

इस तथ्य की पृष्टि के लिये हम स्वामी दयानन्द सरस्वती के इस वचन पर दृष्टिपात करते हैं- दयानन्द सरस्वती ने जहाँ भी यज्ञों का उल्लेख किया है वहाँ उन्होंने ''अग्निहोत्रादारभ्याश्वमेधपर्यन्ता:।'' [4] इस प्रकार कहा है। उन्होंने कहीं भी यज्ञों की संख्या नहीं बताई है।

परन्तु गोपथ ब्राह्मण के इस विभाजन को हम एक नये नजरिये से देख सकते हैं कि उन्होंने अपने विभाजन में प्रचलित और मूल यज्ञों को ही स्थान दिया है। अन्य यज्ञों को उनका भेद या भेदोपभेद या शाखाएँ मान सकते हैं। इस प्रकार हम स्पष्टत: कह सकते हैं कि स्मृतियों व गृहसूत्रों में आये हुये यज्ञों को 'स्मार्तयज्ञ' तथा ब्राह्मण व श्रौत सूत्रों में आये हुये यज्ञों को श्रौत यज्ञों की श्रेणी में रखा जस सकता है।

चूँकि श्रौत यज्ञों की संख्या स्मार्त यज्ञों से कहीं ज्यादा है और अत्यधिक प्रचलन में आने के कारण हमें आज श्रौत यज्ञ ही अधिक देखने को मिलते हैं। यही कारण है कि सामान्यत: सभी यज्ञों को श्रौत यज्ञ कहा जाता है।

यहाँ हम कुछ प्रचलित व अप्रचलित श्रौत यज्ञों पर दृष्टिपात कर लते हैं।

प्रचलित श्रौत यज्ञ	अप्रचलित श्रौत यज्ञ
अग्निहोत्रम्	दाक्षायण
पौर्णमासयाग	द्विरात्र
चांतुर्मासयाग	गर्गत्रिरात्र
सौत्रामणियाग	सप्तरात्र
अग्निष्टोम याग	महाव्रतम्
उक्थ्य याग	ब्राह्मणसव:
अतिरात्र याग	अश्वमेध
दर्शयाग	सर्वतोमुख

अब यज्ञों के दूसरे प्रकार के विभाजन पर दृष्टिपात करते हैं।

''श्रौतस्मार्तानां त्रयो विभाग:''

एक अन्य स्थान पर श्रौत व स्मार्त यज्ञों को नित्य, नैमित्तिक व काम्य यज्ञों में विभाजित किया गया है।

1. नित्य यज्ञ- याज्ञिकों के मतानुसार नित्ययज्ञ फलभावना के बिना किये जाते हैं। अत: उनका कोई लौकिक फल नहीं होता। नित्य यज्ञों को निष्काम भावना अर्थात् कर्त्तव्य बुद्धि से करना चाहिये। उनका फल आत्मशुद्धि पूर्वक मोक्षप्राप्ति को मान सकते हैं।

अग्निहोत्र से लेकर सोमयज्ञ तक सभी श्रौतयज्ञ नित्य यज्ञों की श्रैणी में आते हैं। महाभारत में भी कहा गया है-

''दर्शं च मौर्णमासं च अग्निहोत्रं च धीमत:''।
चातुमस्यिानि चैवासन् तेषु धर्म: सनातन:।। [5]

2. नैमित्तिक यज्ञ- ये यज्ञ भूकम्प, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, गृहदाह आदि से बचने के लिए किये जाते हैं।

3. काम्य यज्ञ- ये यज्ञ लौकिक फल की प्राप्ति की कामना से किये जाते हैं। इसलिए ये काम्य यज्ञ कहलाते हैं। क्योंकि कामनाएँ बहुत सी होती हैं। इसलिये श्रौतसूत्र, ब्राह्मणग्रन्थ, गृहसूत्र, धर्मसूत्र आदि में बहुत से काम्य यज्ञों का विधान किया गया है। जैसे 'पुत्रेष्टि' आदि।

सभी यज्ञ विधि- विवरण की दृष्टि से दो प्रकार के हो जाते हैं- प्रकृति एवं विकृति।

1. प्रकृति याग- 'समग्रांगोपदेशः प्रकृतिः' अर्थात् जिसमें अपेक्षित सभी अंगों का विवेचन किया गया हो उसे प्रकृतियाग कहते हैं।

2. विकृति याग- प्रकृति याग में होने वाली विधियों के अतिरिक्त कर्मों का ही विवरण जहाँ दिया जाता है। उसे विकृति याग कहते हैं।

श्रौत यज्ञों का शास्त्रीय स्वरूप

विभिन्न ग्रन्थों, शास्त्रों आदि में शास्त्रकारों व विद्वानों ने यज्ञों के स्वरूप को अपने-अपने अनुसार कहने का प्रयास किया है-

1. सायण- आचार्य सायण का मत है कि देवता-विशेष के लिये अग्नि में हव्य पदार्थों का त्याग करना यज्ञ कहलाता है-

''उद्दिश्यं देवतां द्रव्य त्यागो यागोऽभिधीयते।'' [6]

2. मत्स्यपुराण- मत्स्यपुराण में यज्ञ का लक्षणा उसके अंगों को आधार मानते हुए किया गया है। मत्स्यपुराण के अनुसार देवताओं, हवियों, ऋक्, साम, और यजुष् मन्त्रों एवं ऋत्विजों तथा दक्षिणा का संयागे जिस कर्म में होता है वह यज्ञ कहलाता है-

''देवतानां देयहविषां ऋक् साम यजुषां तथा।'' [7]
ऋत्विजां दक्षिणानां च संयोगो यज्ञः उच्यते।।

3. सत्यार्थ प्रकाश- यज्ञ उसको कहते हैं जिसमें विद्वानों का सम्मान, यथायोग्य शिल्प, और विद्यादि शुभगुणों का दान हो और अग्निहोत्रादि जिनसे वायु वृष्टिजल और औषधियों को पवित्र करके जीवों को सुख पहुँचाया जाये

4. यास्काचार्य- यास्क के अनुसार-

''यज्ञः कस्मात्? प्रख्यातं यजति कर्मेति नैरुक्ताः'' [8]

निघण्टु में वेनः, अध्वरः, मेधः, सवनम् होत्रा, इष्टि, देवता, विष्णु, इन्द्र, प्रजापति, धर्म आदि यज्ञ के अनेक अर्थ प्राप्त होते हैं।

5. मनु- जो मनुष्य आलस्यरहित होकर यथाशक्ति वेदोक्त कर्मों को करता है वह परम गति मोक्ष को प्राप्त करता है।

''वेदोदितं स्वकं कर्म नित्यं कुर्यातन्द्रितः तद्धि।'' [9]
कुर्वन् यथाशक्ति प्राप्तनोति परमां गतिम्।।

6. आरण्यक- आरण्यकों में वर्णित यज्ञों में विधि-विधान के साथ-साथ उनके आध्यात्मिक और दार्शनिक पक्ष को भी उद्घाटित किया गया है।

7. उपनिषद्- बृहदारण्यक, छान्दोग्य आदि उपनिषदों में मात्र प्रतीकों के माध्यम से सम्पूर्ण यज्ञ प्रक्रिया की साधना की शिक्षा का वर्णन है।

8. आर्योद्देश्यरत्नमाला- धात्वर्थ के आधार पर आर्योद्देश्यरत्नमाला में यज्ञ की परिभाषा इस प्रकार है- ''जो अग्निहोत्र से लेकर अवश्मेध पर्यन्त व जो शिल्प-व्यवहार और जो पदार्थ विज्ञान है, जो कि जगत के उपकार के लिये किया जाता है उसे यज्ञ कहते हैं।

9. पुरुष सूक्त- ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में सृष्टि- विस्तार के लिये स्वयं विराट् पुरुष रूप में बंधा जो सृष्टि-रूप यज्ञ प्रक्रिया का रहस्य उद्घाटित कर रहा है।

''देवा यघज्ञं तन्वाना अवध्नन् पुरूषं पशुम्''।

10. शतपथ ब्राह्मण- इसमें यज्ञ के विषय में कहा गया है कि यज्ञ जिस प्रकार का दिखाई पड़ता है वैसा नहीं है देवता भी परोक्ष हैं और यज्ञ भी परोक्ष है।

''न वै यज्ञः प्रत्यक्षभिवारभे।''
परोक्षं वै देवाः परोक्षं यज्ञः।

इस प्रकार हमने विभिन्न ग्रन्थों व विद्वानों के मतों के द्वारा श्रौत यज्ञों के शास्त्रीय स्वरूप को समझने का प्रयास किया ।

श्रौत यज्ञों की उपयोगिता

इससे पूर्व यज्ञों का विभाजन तथा शास्त्रीय-स्वरूप कहने के पश्चात् अब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि यज्ञ क्यों करें।

आधुनिक युग में बदलती हुई परिस्थितियों में इसकी उपयोगिता, उपादेयता तथा आवश्यकता क्या है? प्रायः लोग ऐसी शंका करते हैं। वेसे भी प्रत्येक कार्य के करने के पीछे कोई न कोई प्रयोजन रहता है। बुद्धिहीन व्यक्ति ही निष्प्रयोजन कार्य किया करते हैं। आखिर घी जैसी महँगी वस्तु अग्नि में फूँकने का भी तो कोई प्रयोजन होना चाहिये। हमारा कथन है कि यज्ञ निष्प्रयोजन नहीं है। इसके पीछे एक प्रयोजन है, उद्देश्य है वह क्या है यही समझने की आवश्यकता है। आइये इस पर विचार करते हैं

यज्ञ के माध्यम से हमारे अंदर पवित्रता की भावनाएँ जन्म लेंगी। जिससे हमारे चित्त का पर्यावरण शुद्ध होगा और अशांति दूर होगी। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए हमें जल, वायु, अन्न, आदि की आवश्यकता होती है। यदि सूर्य न हो, शीतलता, अन्न व औषधि में जीवन-शक्ति डालने वाला, रस भरने वाला चंद्रमा न हो, बादल न हो, वर्षा न हो, ऋतुओं की अनुकूलता न हो, वृक्ष न हो, फल-फूल न हो

तो हमारा जीवन कैसे चलेगा। यज्ञ करने से ये सब शुद्ध होंगे। इनके शुद्ध होने से हमारा जीवन शुद्ध होगा।

ब्राह्मण ग्रन्थों में भी कहा गया है कि 'अग्निर्वे देवानाम् मुखम्'' सभी देवताओं का मुख अग्नि है। क्योंकि अग्नि में डाले हुए पदार्थ, पदार्थ-विज्ञान के अनुसार कभी नष्ट नहीं होते अपितु रूपातंरित होकर, सूक्ष्म होकर लाखों गुणा शक्तिशाली हो जाते हैं। सूक्ष्म होकर अन्तरिक्ष में फैल कर अन्तरिक्ष व द्युलोक में व्याप्त पर्यावरण को भी शुद्ध करने में सक्षम हो जाते हैं। इसीलिये यजुर्वेद के 23 वें अध्याय के 62 वें मन्त्र में कहा गया है ''अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः''।।

उदाहरण रूप में चीनी के थोड़ो से दाने यदि अग्नि में डाल दिये जाये तो भयंकर रोग टी.वी के बैक्टीरिया नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार जायफल, गुगल, लौंग मिलाकर यज्ञ में सामग्री के रूप में प्रयोग किया जाये तो मच्छरों का प्रकोप समाप्त हो जाता है।

वृष्टि यज्ञ के सफल परीक्षण कैलीफोर्निया के 'मिस्टर हैडफिल्ड' ने भी किये हैं। वे दावे के साथ कहते हैं कि मैं आकाश में पानी बरसा सकता हूँ।

यज्ञ द्वारा पर्यावरण शुद्धि का सबसे बड़ा उदाहरण तो आपने 2 दिसम्बर 1984 के विश्व स्तर के समाचार-पत्रों में पढ़ा ही होगा कि भोपाल में स्थित यूनियन-कार्बाइड कारखाने से गैर रिसाव की खबर मिलते ही दो परिवार श्री एस.एल. कुशवाहा और श्री एस. राठौर ने अपने पूरे परिवार के साथ यज्ञ करना प्रारम्भ कर दिया जिससे इन दोनों परिवारों पर हानिकारक गौसों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा?

यज्ञ का आध्यात्मिक पहलू- यज्ञ का उद्देश्य केवल मात्र जलवायु शुद्ध करना ही नहीं है। यज्ञ में जिन वेद-मंत्रों से आहुति दी जाती है। उनसे पूर्व 'ओम्' अन्त में 'स्वाहा' तथा 'इदन्न मम' ये शब्द हमें प्रेरणा देते हैं कि संसा का मूल ओम् है और सु-आह अर्थात् हम अच्छा बोलें। 'इदन्नमम' अर्थात् संसार में कोई भी वस्तु हमारी नहीं है।

इस प्रकार सम्पूर्ण यज्ञ हमें किसी न किसी रूप में प्रेरणा देता है। इसलिये अपनी जीवनचर्चा में, अपने दैनिक व्यवहार में हम यज्ञ रूपी महानतम्, श्रैष्ठतम् कार्य को अपनाए तथा अपने परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्व के समक्ष ग्लोबल वार्मिंग की समस्या का समाधान कर 'सर्वेभवन्तु सुखिनः' की भावना को अपने हृदय में पल्लवित कर पुरुषार्थी बनें।

संदर्भ ग्रन्थाः

1. छान्दोग्योपनिषद, 3.16
2. मैत्रायणी उपनिषद, 6.36
3. गोपथ ब्राह्मण., 1/5/25
4. ऋग्वेद भा. भूमिका प्रतिज्ञाविषय, पृष्ठ 388
5. महाभारत शानि पर्व 269/20
6. सायण भाष्य, ऐतरेय ब्राह्मण, 1.1.7, पृष्ठ 7
7. मत्स्य पुराण., 14.5.44
8. निरुक्त, 3.19
9. मनु. स्मृति., 5.14